ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 4, April 2020

हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श

Dr. Anita Singh

Assistant Professor, Dept. of Hindi, DBS College, Govind Nagar, Kanpur, Uttar Pradesh, India

सार

साहित्य में वृद्ध और युवा या फिर पुराने-नए का जो परिदृश्य होता है वह आमने-सामने अवस्थित दो विरोधी शिविरों के बजाय पूर्वापर संबंधों के सह-अस्तित्व का होता है। नया रचने के उपक्रम में युवा या नए रचनाकार पुराने अनुभवों का पुन: सृजन करते हैं, बदलते युग-संदर्भ में उन्हें नवीकृत करते हैं। भावक्त तेजी से बदलता है पर उसी तरह समाज नहीं बदला करता। वह बदलता है लेकिन गति बहुत धीमी रहती है। समाज भी सदियों में अपना चोला बदल ही लेता है। बीसवीं सदी से समाज में बदलाव तेज हुआ है। आदमी जब से तकनीकी पर आश्रित हुआ है और समाज की महत्वपूर्ण संस्था परिवार और परिवार का महत्वपूर्ण सदस्य मुखिया पर बदलाव की मार भारी पड़ी है। इक्कसवीं सदी में मुखिया का कद घटकर बौना ही नहीं हुआ बदल भी गया है। परिवार का मुखिया सदियों से दादा या पर दादा हुआ करता था जो अब पिता पर आकर ठहर गया है। पिता भी पिता जैसा नहीं, बड़ा भाई जैसा भी नहीं रह सका, वह लगभग दोस्त सा लगता है और एक दिन वह भी नहीं रह जाता है अपित दुश्मन सा लगने लगता है और एक दिन घर से बाहर का रास्ता दिखाने में देर नहीं लगती सो घर से बेदखल वृद्धाश्रम में शरण पाता है। घर से बेदखल वृद्धाश्रम का आसरा, पिता का यह कैसा रूप है? घर का मुखिया जल्दी ही मुखियापन से मुक्त कर दिया जाता है। वृद्धावस्था का जीवन, पारिवारिक संबंध और रिश्तों में आ रही गिरावट व विचलन को साहित्य की पापूलर विधा उपन्यास साहित्य के माध्यम से देख सकते हैं।

अब तक कोई एक दर्जन उपन्यास बुजुर्ग पीढ़ी की चिंताओं पर आधारित दृष्टि में आये हैं। भारतीय सामाजिक व परिवार संस्था में परिवर्तन आया है तो मुखिया का स्थान लगातार नीचे जा रहा है। आधुनिकीकरण और व्यक्तिवादिता ने सामाजिकता, रिश्ते-नाते और संस्कारों को आमूल चूल बदल डाला है। बदलते दौर में बुजुर्ग का वह सम्मान नहीं रह गया है। नयी पीढ़ी के पास पुरानी पीढी के लिए समय नहीं है सो वह घर में ही अकेला हो चला है। एकल परिवार में उसके लिए एक कोना भी नहीं रह गया है। क्या कल का मुखिया वृद्धावस्था में दूसरी दुनिया का जीव हो जाता है? 'सश्रर पार का दूसरा संसार' में प्रभुदश्र शर्मा बुजुर्ग की बदलती स्थिति को उजागर करते हैं तो साहित्य में कई रचनाएं सामने आ रही है। नई संस्थाएं, नयी योजनाएं और नये कानून बनाये जा रहे हैं।

परिचय

भारतीय परिवार व रिश्तों की संरचना तेजी से बदल रही है। न केवल परिवार का मुखिया अपितु पिता-पुत्र संबंध में जमीन आसमान का अंतर आ चुका है। पुत्र के रिश्ते से मिले दर्द को आगामी पिताओं को सदियों तक सहना होगा। वर्तमान दौर में पिता-पुत्र संबंध बड़े ही नाजुक दौर से गुजर रहे हैं।[1]

वृद्ध जीवन पर आधारित निम्न उपन्यास है-मस्तराम कपूर-'विषय-पुरुष' (1997) पंकज बिश्ट-'उस चिड़िया का नाम' (2005), काशीनाथ सिंह, 'रेहन पर रग्घू' (2006) चित्रा मुद्गल-'गिलिगडू' (2010) निर्मल वर्मा 'अंतिम अरण्य'(2011), हृदयेश -'चार दरवेश' (2011) अज्ञेय-'अपने-अपने अजनबी'(2005), कृष्णा सोबती-'समय-सरगम' (2012), ममता कालिया-'दौड़', रवीन्द्र वर्मा 'पत्थर ऊपर पानी' और डॉ सूरज सिंह नेगी के तीन उपन्यास हैं-'रिष्तों की आंच' (2016), 'वसीयत' (2018) और 'नियति चक्र' (2019) आदि है। उपन्यास के अलावा कई दर्जन कहानियां वृद्ध विमर्श करती हुई आ रही हैं।

जहां एकतरफ 'समय सरगम' में दो समानधर्मा वृद्ध समय को आशीर्वाद की तरह गुजार रहे हैं, वहीं बहुतेरे घर से बेदखल हो रहे हैं, मारे पीटे जा रहे हैं (गिलिगडू) या घर से दूर पुलियाओं पर बैठकर समय गिन रहे हैं (चार दरवेश) और कुछ नहीं तो भारतीय आश्रम व्यवस्था से निकल मठों में (विषय-पुरुष) या पांचवां आश्रम की शरण में हैं। ऐसे कम ही हैं जिन वृद्धों को 'रिश्तों की आंच' मिल रही हैं, 'नियतिचक्र' में पिसकर भी सुबह के भूले शाम को लौट आते हों और जिन्हें बुजर्गों के हाथों से 'वसीयत' मिलती है। उपन्यास साहित्य समाज व परिवार में बुजुर्ग सदस्यों की स्थिति व बदलते रूप से दो-चार हुआ जा सकता है।[2]

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 4, April 2020

क्या वृद्धत्व के लिए भी किसी तरह की तैयारी हो सकती है? मस्तराम कपूर का उपन्यास विषय-पुरुष' का नायक धीरे-धीरे घर से बेगाना होकर एक मठ में पहुंच जाता है। अक्सर बुजुर्ग मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारों की शरण हो लेते हैं या कथा पांडालों में तालियां बजाकर अपने जीवनभर में किये पापों से मुक्ति के उपाये खाजते हैं। रचना में ऐसे मठों की धज्जियां उड़ाई गई हैं, जहां दिखावे और भ्रमों के सिवा कुछ नहीं होता है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य में कृष्णा सोबती का-'समय-सरगम' एक प्रयोग है। ऐसे सौभाग्यशाली कहां हैं जो एकके बिछुड़ जाने पर अकेले होकर घुटघुट कर न जीते हों। कृष्णा सोबती की रचना में 'आरण्या' और 'ईशान' दोनों मिलकर जैसा जीवन जीते हैं वह रचनाकार की कल्पना की दुनिया भले ही हो पर आदर्श वृद्ध जीवन की झांकी दिखाई देती हैं और भारतीय पंरपरा को नई दिशा मिलती है। अन्यथा वृद्ध मौत का इंतजार करने का दूसरा नाम रहा है।

तीन उपन्यास में मृत्यु के दर्शन होते हैं- 'अंतिम अरण्य', 'उस चिड़िया का नाम' और 'अपने-अपने अजनबी' इनमें मृत्यु को दर्शन के स्तर पर जीने व समझने का गंभीर प्रयास है। 'अंतिम अरण्य' में मृत्यु उपन्यास का मूल स्वर रहा है। नायक मृत्यु से आक्रांत या डरा हुआ नहीं है। नजदीक आती मृत्यु का अहसास नजदीक रहने वाले ही चिंतन करते हुए दिखाई देते हैं। 'उस चिड़िया का नाम' में बेटा घर आता अवश्य है पर मृत्यु संस्कार में किसी तरह की दिलचस्पी नहीं लेता। बेटी, भाई के इस व्यवहार से चौंकती है, जब वह किसी चिड़िया की खोज में निकल जाता हैं। उसे कर्मकांड में विश्वास नहीं हैं। 'अपने-अपने अजनबी' में 'रहस्य' बड़ा सवाल है। ईष्वर और मृत्यु दोनों ही रहस्य है। योके जब सेल्मा को मरा हुआ पाती है तो कर्मकांड और प्रार्थना पर सोचती है। वह ईश्वर से नहीं सेल्मा से क्षमा मांगती है। प्रभुदश्र शर्मा का कहना है कि हर व्यक्ति को अपनी मौत चुनने की आजादी होनी चाहिए।

पुत्र, पिता से अधिक मां के नजदीक रहता है। 'उस चिड़िया का नाम' का नायक पिता को माफ नहीं कर पाता है ठीक 'वसीयत' की तरह। पुत्र जिंदगीभर गांव नहीं पहुंचता है, एक दिन मां चली जाती है और एक दिन पिता भी नहीं रहते। ऐसी ग्रंथि कि पिता की मृत्यु हो जाने पर भी बनी रहती है। 'उस चिड़िया का नाम' में बहन को लगता है कि भाई ऐसे कैसे हो गया है? [3]

कुत्ते की पसंद तो हो सकती है लेकिन घर के मुखिया वृद्ध की नहीं। चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'गिलिगडू' में एक कोना में किसी तरह सांस ले रहा वृद्ध है तो उसका मित्र पूर्व सैनिक अपने औरस द्वारा मारकर छोड़ दिया जाता है। दोनों चाहते हुए भी एक दूसरे के घर नहीं जा पाते हैं जब एक जाता है तब तक वह कई दिनों पूर्व दुनिया से कूंच कर चुका होता हैं। हर वृद्ध की नियति है मौत और इस विषय पर ग्रंथ भरे पड़े हैं।
चारों वृद्ध कहने को तो अपने-अपने घर में रहते हैं पर उनका मिलन स्थल बनती है शहर के बाहर -पुलिया। ह्रदयेश का 'चार दरवेश' में बुजुर्गों की शरणस्थली पुलिया बनती हैं जहां वे दुनिया जहान की बातें खुलकर करते हैं। घरों से उखड़े लोग अपने लिए उपयुक्त जगह घर, मुहल्ले और शहर से दूर दिन बिताते हुए नजर आते हैं।

'बहुत जी लिए अपनों के लिए' जैसे उद्गार जब निकलते हैं तब एक वृद्ध पिता का परिवार से मोह भंग होने की दास्तान है 'रेहन पर रग्घू'। जिसके दोनों बेटे उनसे दूर चले जाते हैं बार-बार बुलाने पर भी नहीं लौटते हैं। वह जमीन का महत्व समझता है सो अंतिम समय में बेटों से आकर जमीन बेचने के लिए कहता है क्योंकि उससे यह काम नहीं हो सकता। वह बड़े बेटे के द्वारा छोड़ दी गई पत्नी के साथ रहता है।
लेकिन बुजुर्ग होते पिता और उसके खास प्रिय व धरोहर बेटा क्योंकर दूर हो रहा है? इस भावना की मूल तक जाने का प्रयास डॉ सूरज सिंह नेगी के उपन्यास 'वसीयत' में बखूबी हुआ है। इसमें न केवल पिता की चिंता है अपितु उसका समाधान भी खोजा गया है। समधान रचना तक ही नहीं व्यवहार के धरातल पर भी पत्र व डायरी के रूप में हैं। वर्तमान समय में रिश्तों की समस्या बड़ी पेचीदा, जटिल और विकट होती चली जा रही पिता-पुत्र के ऐसे ही पहाड़ होते दर्द को विषय वस्तु बनाया है अपने तीन उपन्यासों में डॉ नेगी ने 'रिश्तों की आंच', 'वसीयत' और 'नियति चक्र'। वर्तमान दौर में पिता-पुत्र संबंध बड़े बदलाव से गुजर रहे हैं।

इस खास संबंध में आ रहे बदलाव को 'वसीयत' उपन्यास में चित्रित किया हैं। एक तरफ पिता अपने बेटे के अलगाव में है तो दूसरी तरफ अपने पिता को वक्त न देने के पश्चाताप है जो पुत्र द्वारा उपेक्षा करने पर आंसू बहाता नजर आता है। 'रिश्तों की आंच' मुकम्मल परिवार के मुखिया की कहानी है जो परिवार को किसी भी सूरत में बिखरते हुए नहीं देख सकता। वह परिवार को एक रखने का भरसक प्रयास करता है। परिवार रिश्तों के बल पर चलता व बनता है जो हर हाल में निभाने पड़ते हैं। रिश्तों की आंच धीमी हो रही है, ठंडे हो चले हैं। खून सफेद हो गया है फिर भी मुखिया रिश्तों की आंच बनाए रख सकता है।[4]

तीन रचनाएं, तीन कथानक और तीन विषय वस्तु है। इन रचनाओं में पिता-पुत्र संबंध केंद्र में रहे हैं और वृद्ध पिता की नियति सभी में दिखलाई गई है। लगता है रचनाकार तीनों रचनाओं में पिता पर विमर्श करते हुए लगते हैं। वृद्ध की बदलती हुई भूमिका, पिता-

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 4, April 2020

पुत्र संबंध में आ रहे बदलाव और रिश्तों में बस चुकी ठंडक को परिलक्षित किया है। इन तीनों कृतियों में पिता-पुत्र व वृद्ध के भिन्न-भिन्न रूप दिखाई देते हैं। कहीं पिता तो कहीं पुत्र के संस्कार जागते हैं और सुबह के भूले शाम होते होते लौट आते हैं।

भारतीय संस्कृति में पुत्र को बड़ा दायित्व दिया गया है लेकिन वह हर दायित्व से मुक्त हो पलायनमुखी है। पिता के लिए पुत्र उस समय शोक गीत हो जाता है जब वह पिता की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता है। तब पाली गई अपेक्षाएं शोक गीत के रूप में शेष रह जाती है। आधुनिक दौर पुत्र की आकांक्षाओं से पिता की अपेक्षाओं से संघर्ष का है। इस संघर्ष में पिता के हिस्से में अपेक्षा के बजाए उपेक्षा मिलती है। भारतीय संस्कृति की पाश्चात्य संस्कृति से मुठभेड़ है। यह देश राम और श्रवणकुमारों का रहा है लेकिन वर्तमान में व्यक्तिवादी सोच बढ रही है।
भारतीय वृद्ध परिवार में हाशिये पर है। युवाओं में भारतीय संस्कारों का अभाव है, परंपराओं को दकियानूसी मानकर कथित आधुनिकता की दौड़ में, मां-पिता को घर से बाहर का रास्ता दिखाने से नहीं चूक रहे हैं। आपसी रिश्तों में आ रही गिरावट से पिता-पुत्र दो ध्रुवों अर्थात नदी के दो किनारों की तरह हो चले हैं। नयी पीढ़ी पाश्चात्य दिखावे की शिकार व बुरी तरह से भटकी हुई है। इस दौर में जब मूल्यों पर व्यक्तिवादिता और दिखावा हावी हो चला है तब वृद्धों के लिए क्या वृद्धाश्रम ही अंतिम शरणस्थली है?

विचार-विमर्श

हिंदी साहित्य में उभरे अनेक विमर्श - दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, स्त्री विमर्श,किन्नर विमर्श के बाद वृद्ध विमर्श उभरकर हमारे सामने आ रहा है.समाज में उद्भवित अनेक समस्याओं में वृद्धों की समस्या विशेष रूप से देखने को मिलती है.जिस तरह से युवा पीढ़ी की चर्चा ज़ोरों पर है,उसे देखते हुए वृद्ध विमर्श का होना उचित लगता है.आज वृद्ध हमसे,हमारे परिवार से उपेक्षित होते जा रहे है.सही माहौल,सही सोच,दो पीढ़ी के बीच का अंतर तथा शैक्षिक और सांस्कारिक विचारों का आदान – प्रदान ,शैक्षिक,सामाजिक तथा सांस्कारिक अनुभवों में अंतर आदि के कारण बुज़ुर्गों के प्रति हमारी सोच तथा व्यवहार में काफी अंतर आ गया है.अपने आप को educated समझनेवाले हम तथा युवा पीढ़ी उनके साथ adjust नहीं हो पाते है.वृद्धों या बूढ़ों को लेकर आमतोर पर ऐसे लोगों की तस्वीर उभरती है जो सफ़ेद बाल, झड़े हुए दाँत, शिथिल – ऊर्जा – हीन शरीर लेकर जीवन यापन करते है.इस संदर्भ में केशवदास की उक्ति चर्चित है –

केशव केशन असकरी जस अरिहु न कराय ,

चंद्रवदन मृगलोचनी बाबा कहि कहि जाए .

अर्थात चंद्रवदन मृगलोचनी वनिताओं को आकृष्ट करने की सामर्थ्य से चूक जाने का नाम बुढ़ापा है.जिन्होंने वृद्धावस्था को दंतहीन,जर्जर काया, शिथिल इंद्रियों की दशा के रूप में देखते हुए चित्रित किया है.हम वृद्ध के रूप में एक बुजुर्ग, निस्सहाय, क्षीण काया मगर फिर भी सोच – विचार तथा अनुभवों से परिपूर्ण एक व्यक्ति को अपमानित करते है.'वृद्धावस्था पर अपने विचार व्यक्त करते हुए प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक अनातोले फ्रांस का यह कथन याद आता है – काश ! बुढ़ापे के बाद जवानी आती !'अनातोले का यह कथन बड़ा ही सांकेतिक है.जवानी वह शारीरिक अवस्था है,जो जोश ऊर्जा से ओत – प्रोत होती है, जिसका उपयोग करते हुए हर व्यक्ति अपने – अपने ढंग से जीवन जीता है और इस क्रम में वह बुढ़ापे तक पहुँचता है.बुढ़ापे में जवानीवाली ऊर्जा शक्ति तो रह नहीं जाती,रह जाता है विविध अनुभवों का भंडार.इन अनुभवों के आलोक में व्यक्ति को जवानी के अनुभव रहित जोश में किये गए अपने कई गलत निर्णयों और कार्यों का एहसास होता है.तब वह अनुताप की आँच में तपते हुए सोचता है कि अगर उसे बुढ़ापे में जवानी जैसी ताकत, स्फूर्ति मिल जाए तो वह पहले से बेहतर, श्रेयस्कर कार्य कर सकता है.[5]

दरअसल , बुढ़ापे को निष्क्रिय और शिथिल शारीरिक अवस्था समझकर बहुत ही काम की चीज नहीं समझा जाता.बचपन से लेकर जवानी तक के जीवनानुभवों का कोश होता है,ऐसा प्रकाश पुंज होता है जिसके आलोक में युवा पीढ़ी अपने वर्तमान को संवारते हुए भविष्य का शृंगार कर सकती है.इसी कारण से भारतीय और पाश्चात्य दोनों परम्पराओं में वृद्ध या वृद्धावस्था के प्रति सम्मानजनक भाव रहा है.बड़े – बूढ़ों के अनुभवों और परामर्शों से लाभ उठानेवाली युवा पीढ़ी ही नव – निर्माण कर पाती है, जबकि इसके विपरीत मार्ग पर चलनेवाली युवा पीढ़ी युवा शक्ति विध्वंस की वीरानगी छोड़ जाती है। [12] इसके संदर्भ में हम रामायण , महाभारत की कथाओं को देख सकते है.महाभारत में एक तरफ भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य , विदुर जैसे तपे – तपाए , अनुभव – सिद्ध – ज्ञानी तत्वेत्ता है, तो दूसरी तरफ जवानी की शक्ति और जोश से उफनते दुर्योधन, दु:शासन , कर्ण आदि जैसे युवकों वृद्धों, बुजुर्गों ने युवा कौरव मंडली

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 4, April 2020

को बहुत समझाया कि पांडवों से युद्ध करने में अहित ही अहित है, फिर भी अहंकार को उतना महत्व देते हुए अंततः युद्ध का मार्ग अपनाया । परिणामतः महाविनाश हुआ.न वृद्ध बचे, न जवान, बचे सिर्फ पाँच भाई पांडव और बेशुमार विधवाओं का चहुं ओर विलाप । इतना ही नहीं, इच्छा मृत्यु का वरदान पाए हुए भीष्म पितामह का महत्व अब अधिक बढ़ जाता है जब वे शर शैय्या पर पड़े हुए अपने अनुभवों के आधार पर युधिष्ठिर को नीति , शांति, अहिंसा, राजधर्म आदि के संबंध में उपयोगी उपदेश देते है , जिन्हें युधिष्ठिर पाथेय स्वरूप स्वीकार करते हुए अपने राजधर्म का निर्वाह करते है .[6]

परिणाम

इसके अलावा हिन्दी की कई कहानियों में वृद्धों की समस्या को निरूपित किया गया है.प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' की वृद्धा के लिए जिव्हा स्वाद के सिवा और कोई चेष्टा शेष न थी.समस्त इंद्रिया- नेत्र , हाथ और पैर जवाब दे चुके थे.पृथ्वी पर पड़ी रहती थीं.घरवाले उनके खाने – पीने के समय का ध्यान नहीं रखते थे।और चीजों के प्रति वे उतना आकर्षण या तीव्रता नहीं जताती थी मगर भोजन का समय टल जाता या उसका परिणाम पूर्ण न होता अथवा बाजार से कोई वस्तु आती और उन्हें न मिलती तो ये रोने लगती .उनका रोना – सिसकना साधारण रोना न था, वे गला फाड़ – फाड़कर रोती थीं.बूढ़ी काकी जब घर में अपना राग अलापने लगती तब घरवाले आग हो जाते और घर में न जाकर ज़ोर से डांटते.लड़कों को बूढ़ों से स्वाभाविक विद्वेष होता ही है और फिर माता – पिता का ये रंग देखकर वे बूढ़ी काकी को और सताया करते. कोई चुटकी काटकर भागता , कोई उनपर पानी की कुल्ली कर देता. काकी चीख मारकर रोतीं.परंतु यह बात प्रसिद्ध थी कि वह केवल खाने के लिए रोती हें अतएव उनके संताप और आर्तनाद पर कोई ध्यान नहीं देता था।[11] काकी क्रोधातुर होकर जब भी बच्चों को गालियाँ देने लगतीं तो बहू रूपा के वहाँ पहुँचते ही वे अपनी जिव्हा कृपाण का कदाचित ही प्रयोग करती थीं.यद्यपि उपद्रव – शांति का यह उपाय रोने से कहीं अधिक उपयुक्त था। संपूर्ण परिवार मे यदि काकी से किसी को अनुराग था तो वह बुद्धिराम की छोटी लड़की लाड़ली थी. लाड़ली अपने दोनों भाइयों के भय से अपने हिस्से की मिठाई – चबैना बूढ़ी काकी के पास बैठकर खाया करती थी.यही उसका रक्षागार था.[7]कई बार काकी की शरण उनकी लोलुपता के कारण बहुत महंगी पड़ती थी , तथापि भाइयों के अन्याय से सुरक्षा कहीं सुलभ थी तो बस यहीं. इसी स्वार्थानुकूलता ने उन दोनों में सहानुभूति का आरोपण कर दिया था. वैसे भी बच्चे अपने बुजुर्ग अर्थात नाना – नानी , दादा – दादी ,या अन्य कोई बुजुर्ग जो उनके प्यार का, दैनिक प्रवृत्तियों का तथा उनके खेल का सहभागी हो , उन्हें बहुत प्रिय होता है और अन्य किसी के अधिकार से पहले वे उनपर अपना अधिकार समझते है तथा उससे बहुत प्यार करते है।

भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' कहानी की वृद्धा शामनाथ की माँ है. शामनाथ अपनी तरक्की के लिए माँ को जरिया बनाता है. माँ वृद्ध हें बाल बिखरे है, आँखों से धुंधला दिखाई देता है, कानों से सुनाई नहीं देता.रात – दिन माला जपती रहती है और प्रभु के नाम का रटन करती है। तीर्थ यात्रा पर जाने की इच्छुक माँ मन की अभिलाषा व्यक्त नहीं कर पाती है.बेटे की तरक्की के लिए लोकगीत गाकर चीफ को खुश करती है.फुलकारी के काम में निपुण माँ ,आँखों से कम दिखाई देने पर भी बेटे की तरक्की के लिए चीफ को फुलकारी बना देने के लिए तैयार हो जाती है.आज मनुष्य बहुत स्वार्थी हो गया है. समर्थ होने पर भी बूढ़े माँ – बाप उसे बोझ लगते है.पाश्चात्य सभ्यता की अंधी दौड़ में वह अपने कर्तव्य और संस्कारों को भूलता जा रहा है. जो माँ शामनाथ को हीन,तुच्छ और हँसी का पात्र प्रतीत होती थी , जिसको व्यवहार कुशलता और आधुनिकता का ज्ञान नहीं था.वही माँ अंत में चीफ की दावत में चार चाँद लगा देती है और उसकी फुलकारी ही उसकी पदोन्नति का रास्ता खोल देती है.[8]

मन्नू भंडारी की 'अकेली' कहानी की सोमा बुआ अकेली है, वृद्ध है.पति छोड़कर चले गए है.पुत्र की मौत और पति के हरिद्वार चले जाने के पश्चात सोमा बुआ अकेली रह जाती है. उनके वर्ष के ग्यारह महीने हरिद्वार में और सिर्फ एक महीना अपने घर में बीतता था. इस एक महीने में वे बुआ से दो मीठे बोल भी नहीं बोलते थे.इसके बजाय उन्हें अलग – अलग कारणों से दिनभर डाँटते रहते थे. अतः वह अपने आपको समाज को सौंप देती है अर्थात सामाजिक कामों में अपना मन रमा लेती है.पति के न होने पर बुआ आस - पड़ोस के लोगों के भरोसे अपना समय काट लेती थी.किसी के घर कोई भी कार्य वे करती.उनकी रोक – टोक पर वे कहतीं :– 'इन्हें तो नाते – रिश्तेवालों से कुछ लेना – देना है नहीं ,पर मुझे तो सबसे निभाना पड़ता है .'[9]

निष्कर्ष

आधुनिक दौर संतानों की अपेक्षाओं और वृद्धों की उपेक्षाओं का दौर है. भारतीय संस्कृति की पाश्चात्य संस्कृति से मुठभेड़ है.यह देश राम और श्रवणकुमारों का रहा है.मगर वर्तमान में व्यक्तिवादी सोच के बढ़ने के कारण भारतीय वृद्ध परिवार हाशिये पर है .युवाओं में

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 7, Issue 4, April 2020

भारतीय संस्कारों का अभाव है. परम्पराओं को दक़ियानूसी मानकर कथित आधुनिकता की दौड़ में माता – पिता को घर से बाहर का रास्ता दिखाने से ये नहीं चूकते .नई पीढ़ी पाश्चात्य दिखावे की शिकार होने के कारण बुरी तरह भटक रही है.इस दौर में जब मूल्यों पर व्यक्तिवादिता और दिखावा हावी हो चला है तब वृद्धों के लिए क्या वृद्धाश्रम ही अंतिम शरण स्थली है ?[10]

अंत में अनामिका के शब्द – 'जो घर में हो कोई वृदधा –

खाना ज्यादा अच्छा पकता है ,

परदे – पेटीकोट और पायजामे भी दर्जी और रफूगरों के मोहताज नहीं रहते

रहती है वृदधाएँ, घर में

लेकिन ऐसे जैसे अपने होने की खातिर हों क्षमाप्रार्थी

लोगों के आते ही बैठक से उठ जाती ,

छुप – छुपकर रहती है छाया - सी , माया –सी ।

*** ' उन्हें सबसे अच्छे लगते है वे लोग

जो पास नहीं आते और कभी जान नहीं पाते

की छाले हें छालों के भीतर .'

संदर्भ

1) वृद्धावस्था संबंधी निदान (वृद्धों के लिए तकनालॉजी समाधान पोर्टल)
2) 45_प्लस_इण्डिया - भारत के वृद्धजनों के लिये पोर्टल
3) International Federation on Aging — informs and promotes positive change for old people globally
4) एल्डर केयर आपके द्वार
5) बास, एस.ए. (2006)। जेरोंटो लॉकजिकल थ्योरी: होली ग्रेल के लिए खोज. जेरोंटोलॉजिस्ट, 46, 139-144.
6) बाथ, पी.ए. (2003)। सेल्फ-रेटेड हेल्थ/ मोर्टेलिटी संबंध में बूढ़े पुरुषों और औरत के बीच मतभेद. जेरोंटोलॉजिस्ट, 43 387-94
7) Charles, S.T.; Reynolds, C.A.; Gatz, M. (2001). "Age-related differences and change in positive and negative affect over 23 years". Journal of Personality and Social Psychology. 80 (1): 136–151. PMID 11195886. डीओआइ:10.1037/0022-3514.80.1.136.
8) Mather, M.; Carstensen, L. L. (2005). "Ageing and motivated cognition: The positivity effect in attention and memory" (PDF). Trends in Cognitive Sciences. 9 (10): 496–502. PMID 16154382. डीओआइ:10.1016/j.tics.2005.08.005. मूल (PDF) से 7 मार्च 2008 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 23 जनवरी 2011.
9) मसोरो ई.जे. एंड ऑस्टैड एस.एन.. (एड्स.): हैन्डबुक ऑफ़ द बायोलॉजी ऑफ़ एजिंग, छठा संस्करण. अकादमी प्रेस. सैन डिगो, सीए (CA), संयुक्त राज्य अमेरिका, 2006. ISBN 0-12-088387-2
10) मूडी, हैरीआर. आयुर्वृद्धि: अवधारणाएं और विवाद. 5 एड. कैलिफोर्निया: पाइन फोर्ज प्रेस, 2006.
11) जैक्स, आर.टी., हशर, एल., एंड ली, के.जेड.एच. (2000)। स्मृति मानव. एफ.आई। एम. क्रेक एंड टी.ए. सौल्टहॉउस (एड्स.), द हैन्डबुक ऑफ़ एजिंग एंड कॉग्निशन (पीपी. 293-357)। माहवाह, एनजे: एर्लबौम.
12) तंबाकू जोखिम के जटिल हस्ताक्षरों के साथ एक छोटे सेल फेफड़ों के कैंसर जीनोम प्रकृति 463, 184-190 (14 जनवरी 2010)